ORIGINAL RESEARCH PAPER

History

Volume : 6 | Issue : 9 | September 2016 | ISSN - 2249-555X | IF : 3.919 | IC Value : 74.50

चौहान शासनकाल की धार्मिक स्थिति

KEYWORDS

बनवारी लाल यादव

शोधार्थीए इतिहास व संस्कृति विभागए राजस्थान विश्वविधालय, जयपुर।ए रजि. न0 699/13

राजस्थान के मध्य भाग मे स्थित सपालदक्ष के चौहान शासक सभी धर्मो के प्रति सहिष्णु शासक थे चौहान राजाओं का शैव धर्म के प्रति विशेष अनुराग था। पूर्व मध्यकालीन (10 वीं शताब्दी) सपालदक्ष व उपरमाल क्षैत्र में पाशुपत संप्रदाय विशेष प्रसिद्ध रहा। चौहान राजाओं ने शैव मन्दिर निर्माण व जीर्णोद्वार हेतु धार्मिक अनुदान प्राप्त किये। पुष्कर के थावला गांव से वि.स 1013 के पांच अभिलेख शैव मन्दिर से संबंधित प्राप्त होते है। हर्ष मन्दिर अभिलेख जों वि. संवत 1030 मे उत्कीर्ण किया गया है, पाशुपत योगीयो के बारे में विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। यहां से पाशुपत मत की शाखा लकुलीश जो दक्षिण भारत में लोकप्रिय थी, के भक्त विश्वरूप का वर्णन मिलता है।[1] विश्वरूप का शिष्य प्रशास्ता था। इसका शिष्य अलट चौहान राजा सिन्हराज का समकालीन था। उसकी पीठ राणोली (सीकर) में स्थित थी।[2] इसके बाद विस. 1227 में अवधोत उनकी गद्दी का उत्तराधिकारी बना। हर्ष शिलालेख के अनुसार वह शरीर पर भस्म लगाता था, धरती का बिछौना था, चार वस्त्र ही धारण करने हेतु रखता था, एक कठोरा भर भीख से अपना जीवन यापन करता था। अलट व भवधोत दोनो ही नग्न पशुपात थे। नवीं शताब्दी की रचना उपमीति भव प्रपंच कथाओ से भी दिगम्बर शैव साधुओं के उल्लेख प्राप्त होते है। वर्तमान मेवाड रियासत का उत्तरी प0 क्षेत्र उपरमाल के नाम से जाना जाता था, लकुलीश सम्प्रदाय से सम्बन्धित बहुत से मन्दिरो का वहॉ निर्माण किया गया। वर्तमान चितौड जिले के मेनाल स्थान पर विस. 1226 में ब्रहममुनि के द्वारा शैव मन्दिर मठ का निर्माण किया गया।[3] लाहौरी शिलालेख (विस. 1211) विश्वेश्वर प्राजना का विवरण देता है।[4] धोद शिव मंदिर (विस. 1225) से विसलदेव के शिष्य प्रभाष राशि का विवरण प्राप्त होता है।[5] चौहानशासक चंदन की पत्नी रूद्राणी ने सहस्त्रलिंग मंदिर का निर्माण करवाया। सहस्त्रों दीपकों से यहां रोशनी की व्यवस्था पुष्कर मे की थी।[6] चन्दन के पुत्र विग्रहराज ने पंच वक्त्रशिव नाम से पुष्कर में विशाल शिव मन्दिर का निर्माण करवाया जो कैलाश के समकक्ष था। अजयराज ने भी शिव मन्दिर बनवाया। अर्णोराज ने पिता की याद में शिव मन्दिर बनवाया। सोमेश्वर ने वैधनाथ मंदिर का निर्माण करवाया। वर्तमान बीसलपुर बांध के समीप विग्रहराज ने गोकर्णेश्वर शिव मन्दिर का निर्माण करवाया। उन्नत शिखर पुष्प व बिजौलिया शिलालेख (विस. 1226) से शिव मन्दिरो का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है, घटेश्वर, कुमारेश्वर, कपि. लेश्वर, महाजालेश्वर व जलेश्वर इत्यादि। गोकर्णेश्वर मंदिर (वि.संवत 1244) से मायाधर के पुत्र वातुदा का नाम मंहत के रूप में ज्ञात होता है।[7]

हिन्दू धर्म के शैवमत के समान वैष्णव मत भी चौहान शासनकाल में पर्याप्त फलीभुत रहा था। रामायण, महाभारत व पुराणो में इस मत के अवतारों की विस्तृत कथायें बतलायी गयी है। शैवगत की अपेक्षा यह नया व आधुनिक मत था जिसमें उपासक कृष्ण व विभिन्न अवतारों को विष्णु का रूप मानते है। पुष्कर स्थित वराह मंदिर का निर्माण राजा अर्णोराज ने 12 वीं शताब्दी में करवाया था। राणा प्रताप के भाई सगर ने इसका पुनःनिर्माण करवाया किन्तु सत्रहवीं शताब्दी में औरंगजेब ने फिर से तोड़ दिया। औरंगजेब की मृत्यु के बाद एकबार फिर इसका पुनःनिर्माण करवाया गया। जयपुर नरेश सवाई जयसिंह ने भी इसके भग्नावशेषों पर एक भवन का निर्माण करवाया जो आज भी मौजूद है। यहॉ स्थापित विग्रह को भाद्रपद माह की जल झूलनी एकादशी के दिन मंदिर से बाहर निकालकर पुष्कर जी में स्नान करवाया जाता है तथा भव्य शोभा यात्रा निकाली जाती है।[8]

पृथ्वीराज विजय संदेश रक्षा व नाडोल के अभिलेखो (विस.1198) मे निरंतर उनका उल्लेख प्राप्त होता है। पृथ्वीराज विजय में तत्कालीन समय में दशावतार विष्णु के उल्लेख प्राप्त होते है। पृथ्वीराज तृतीय के गर्दन पर दशावतार विष्णु की मूर्ति बुराईयो से बचाने हेतु रखी जाती थी।[9] 12वी शताब्दी के अढाई दिन का झोपडा अभिलेख से दशावतार विष्णु की स्तुति के 37 सर्ग प्राप्त होते है। कृष्ण विष्णु का आठवॉ अवतार था।[10] प्रारम्भिक चौहान राजा चामुण्डराय ने नरपुर में विष्णु मंदिर बनवाया।[11] पृथ्वीराज विजय के लेखक जयानक ने विभिन्न चौहान राजाओं की देवताओं, अवतारो, रामचन्द्र व परशुराम से तुलना की है। अढाई दिन का झोपडा में भी विभिन्न वैष्णव प्रतीकों व उत्कीर्णो की बहुतायत है। विभिन्न वैष्णव मूर्तियों और अन्य हिन्दू देवताओ की मूर्तिया विभिन्न स्थानो पर उत्कीर्ण की गई है। इसकें अलावा विष्णु के समान रूपों यथा लक्ष्मीनारायण दशावतार, महाविष्णु व शेषशायी भी प्रसिद्ध हो रहे थे।

पृथ्वीराजविजय से ज्ञात होता है कि पृथ्वीराज का महल खूबसुरत म्यूरेल व रामायण दृश्यों से युक्त था, इन विभिन्न तथ्यों से ज्ञात होता है, कि चौहान शासनकाल में वैष्णव धर्म अपनी उपलब्धियों के स्वर्णिम अवसरों सें गुजर रहा था।[12] आस्तिकवादी दर्शन के अलावा सपालदक्ष क्षेत्र में नास्तिकवादी दर्शन भी विकसित हो रहा था, जिनमे बौद्ध व जैन का प्रमुख स्थान है। जैन भी विभिन्न उपशाखाओं में विभाजित थे। खरतरगच्छपंथी जिनदतस. री ने चैत्यवासी पदमप्रभ व श्रीधर हरि को धार्मिक वादविवाद में पराजित किया।श्वेताम्बर जैन धर्म के साधु जिनदत्तसूरी का जन्म ई. 1122 में हुआ था तथा मृत्यु ई. 1154 में हुई थी। उस समय बहुत बड़ी संख्या में राजपूतों को जैन धर्म में दीक्षित किया। वह साधु दादाजी के नाम से प्रसिद्ध हुए। उन्हीं की स्मृति में यह दादाबाड़ी बनाई गई। बड़ी विचित्र सी बात है कि एक तरफ तो देष पर गजनवी और गौरी जैसे क्रूर आक्रमणकारी भारत की भूमि पर तलवारों का सौदा कर रहे थे और दूसरी तरफ खयाली पुलावों की सुगन्ध में डूबा यह साधु क्षत्रियों को जैन धर्म में दीक्षित करके उनके हाथ में तलवार के स्थान पर तराजू पकड़ा रहा था। दादाबाड़ी बीसल सागर झील के किनारे पर स्थित है। इसमें भगवान पार्श्वनाथ का एक मंदिर बना हुआ है। मुख्य मूर्ति पर वि.स. 1535 (ईस्वी 1478) तिथि खुदी हुई है। यह खरतरगच्छ आचार्य जिनदत्तसूरी की निर्वाण स्थली के साथ ही विष्व की प्रथम दादाबाड़ी है।[13] जिनवलभ सूरि ने चैत्यवासी विलसितायुक्त जीवन के खिलाफ सादा जीवन का आन्दोलन चलाया। जिनवलभसूरि का यह अनुशासन सपालदक्ष के जैनों में शीघ्र ही लोकप्रिय हो गया।[14] जिनवलभ सूरि की विस. 1211 में अजमेर में मृत्यु हो गयी, इससे पहले वे बहुत सारे लोगो को खरतरगच्छ में समाहित कर चुके थे। उनके शिष्य जिनचन्द्रसूरि की विस. 1213 मे मृत्यु हो गयी। उनके पश्चात् जिनपति सूरि सम्प्रदाय के मुखिया बने। यह आचार्य चौहान शासक पृथ्वीराज तृतीय के समकालीन थे। खरतरगच्छावाली से उल्लेख प्राप्त होता है की नरेना स्थित पृथ्वीराज के दरबार मे जिनपति सूरि व चैत्यवासी पदम प्रभ के बीच वि. स. 1239 में सफल शास्त्रार्थ सम्पन्न हुआ था।[15] श्वेताम्बरो के अनेक संघ भी उस समय सक्रीय अवस्था में थे। राजगच्छ पट्टावली के अनुसार धर्मघोष सूरि ने राजविहार नामक मंदिर का अजमेर मे निर्माण करवाया। चौहान शासक अर्णोराज उनका काफी सम्मान करता था। विग्रहराज चतुर्थ ने इस मन्दिर के निर्माण हेतु अनुदान प्रदान किये। आगमिक वास्तु विचार सार से ज्ञात होता है कि यशोभद्र सूरि ने अर्णोराज के दरबार में दिगम्बर सम्प्रदाय के दयाचन्द व गुनाचन्द को शास्त्रार्थ में पराजित किया। दिगम्बर जैन स्त्रोतो से ज्ञात होता है कि उनके समाज के आचार्य सपालदक्ष, नागौर, डीडवाना व लाडनू शहरो का वर्षाकाल के अतिरिक्त समय में भ्रमण करते थे।[16]

अति सुन्दर जैन सरस्वती प्रतीकात्मक मूर्तिया पालऊ, नरेना (विस. 1202) नासुना (विस. 1216) व लाडनूं (विस. 1219) से प्राप्त होती है। बिजोलिया शिलालेख (विस. 1226) से चौहान राजवंश की वशांवली व श्रेष्ठी लोलक का विवरण प्राप्त होता है। श्रेष्ठी लोलक ने अजमेर नरेना, बधेरा व टोउरायसिंह नामक स्थानों पर जैन मंदिरो का निर्माण कराया।[17] जामडोली शिलालेख के विवरण के आधार पर हम कह सकते है कि चौहान शासनकाल में यहां जैन साधु भट्टारक सागरसेन, चतरसेन व अमृतसेन अपने धर्म प्रचारक कार्य मे संलग्न थे। चौहान शासन काल की मृण्मूर्तियां लाडनूं, सांगानेर, नरेना व आमेर से प्राप्त होती है।[18] धर्म, साहित्य और संस्कृति तीनों ही राश्ट्र को मजबूत करने में सहायक हैं। संस्कृति मानव का मस्तिश्क है, धर्म मानव का ह्रदय और धर्म की रसात्मक अनुभूति साहित्य है। जब–जब संस्कृति ने कठोर रूप धारण किया, हिंसा का पथ अपनाया, रक्तरंजित क्रान्तियॉ हुई, तब–तब साहित्य ने जीवन को सौन्दर्य और षक्ति का वरदान दिया। जैन दृश्टि से धर्म केवल वैयक्तिक आचरण ही नहीं है वह सामाजिक आवष्यकता और समाज–कल्याण व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण घटक है। जहॉ वैयक्तिक आचरण को पवित्र और मनुश्य की आंतरिक षक्ति को जागृत करने की दृश्टि से क्षमा, मार्दव, आज्रव, सत्य, संयम, तप, त्याग, ब्रह्मचर्य जैसे मानवाधारित धर्मों की व्यवस्था है। सामाजिक धार्मिक संगठन को सुदृढ़ तथा स्वस्थ बनाने की दृश्टि से ग्रामधर्म, नगरधर्म, राश्ट्रधर्म, कुलधर्म, गणधर्म, संघधर्म जैसे समाजोन्मुखी स्थविर, प्रषास्ता, गणस्थविर जैसे धर्मनायकों की भी व्यवस्था की गई है। ये जनमानस और समाज से जुड़े रहकर साहित्य के माध्यम से लोक प्रषासन में सहयोग देते हैं। धर्म का मूल केन्द्र व्यक्ति है, धर्म आचरण से प्रकट होता है। उसका प्रभाव समूह या समाज में प्रतिफलित होता है और इसी परिप्रेक्ष्य में जनतान्त्रिक सामाजिक चेतना के तत्त्वों को पहचाना जा सकता है।[19]

राजस्थान के सपालदक्ष क्षेत्र में देवियो की पूजा प्राचीनकाल से की जाती रही है। आ. शापुरा माता चौहानों की कुलदेवी थी। सुधां अभिलेख (विस. 1319) आघेटश्वरी देवी के रूप में इसका वर्णन करता है। पृथ्वीराजविजय के अनुसार मूलराज सौलकीं को पराजित कर विग्रहराज द्वितीय ने गुजरात में आशापुरा देवी का मन्दिर बनवाया। गुजरात की भेंट द्वारिका मे इससे संबधित मन्दिर आज भी बना हुआ है। सपालदक्ष क्षेत्र में शाकंभरी, सकराय, जीणमाता, किनसरिया व गोठ मांगलोद के मंदिर तत्कालीन समय में निर्मित हुए है।[20] जीणमाता मदिर के शिलालेख (विस 1162,1196,1229) से पृथ्वीराज प्रथम, अर्णोराज व सोमेश्वर चौहान शासक का विवरण प्राप्त होता है। जीणमाता मन्दिर का संभामण्डल वि.स. 1230 में पुर्ननिर्मित किया गया। किनसरिया शिलालेख (वि.स. 1056) से कात्यायनी व काली का विवरण प्राप्त होता है।[21] सकराय मंदिर शिलालेख (वि.स. 1056,1155) दुर्लभ. राज द्वितीय व विग्रहराज द्वितीय के शासनकाल के है। गोठ मांगलोद मंदिर के शिलालेख भी वि.स. 1207, 1223, व 1249 चौहान शासन काल के ज्ञात होते है।[22] जैन मतावलम्बी भी मौरखाना मे सुसानी देवी व ओसियां में ओसियां देवी की पूजा करते थे। आस्था मातृका व महिषासुरमर्दिनी मूर्तियों की पूजा भी लोकप्रिय रही थी। चौहान शासनकाल के स्त्रोतो से विभिन्न धार्मिक समारोहों की जानकारी प्राप्त होती है।[23] प्रतिष्ठा महोत्सव ऐसा ही एक समारोह था, जो बडे स्तर पर राज्य में मनाया जाता था। इसके विभिन्न स्तरों पर विभिन्न परम्पराओं का आयोजन किया जाता था। शुरूआत मे कर्मशिला संस्थापना नामक परंम्परा का निर्वाह किया जाता था। मंदिर पूर्ण होने पर एक बडे समारोह का आयोजन द्वारा रखा जाता था। मन्दिर में मूर्ति स्थापना करने पर प्राण प्रतिष्ठा नामक प्रक्रिया का आयोजन आचार्य द्वारा किया जाता था। मूर्तियां एक जगह स्थापना करने के बाद अन्य स्थान पर भी स्थापित की जा सकती थी। पूर्व मध्य काल में ब्राहमण आचार्यो को समाज मे उच्चतम स्थिति प्राप्त होती थी। उनके दूसरे स्थान पर गमन करने पर प्रवेशोत्सव का आयोजन रखा जाता था, ऐसा विवरण खरतरगच्छावली से प्राप्त होता है। आचार्यो द्वारा दीक्षा व वर्षग्रंथी का आयोजन भी किया जाता था। जिनदत सूरि के द्वारा जैन मन्दिर स्थापना के समय चरचरी व संघ पटक प्रक्रियायें अपनायी जाती थी। चक्रवर्ती व तीर्थंकर

Volume : 6 | Issue : 9 | September 2016 | ISSN - 2249-555X | IF : 3.919 | IC Value : 74.50

के समान जीवन जीने का सपना दिखाया जाता था। जैनियो द्वारा कालयानिक, यात्रोंत्सव व आस्थानिका समारोहो का आयोजन किया जाता था।[24] इस प्रकार पूर्वमध्यकालीन चौहान शासनकाल में सभी धर्मो को समान रूप से महत्व दिया गया, जिससे भारत में ध्ीरे धीरे सर्वधर्म समभाव की महत्वपूर्ण परम्परा का विकास हुआ।

सन्दर्भ सूची :–

1द एपीग्राफिया इण्डिका, अंक , पेज 123

2द खरतरगच्छ पट्टावली, पेज 211

3द जनरल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल , पेज 48

4द वरदा अंक 8, पेज 12

5द वहीं, पेज 14

6द एपीग्राफिया इण्डिका अंक , पेज 102

7द अजमेर मेरवाड़ा का इतिहास, मोहनलाल गुप्ता, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2001, पृ. 21

8द पृथ्वीराज विजय अंक , 50

9द एपीग्राफिया इण्डिका अंक , पेज 178–182

10द पृथ्वीराजविजय अंक , पेज 67

11द वहीं अंक 60–61 9–12

12द राजस्थान इतिहास एवं संस्कृति, विष्वकोश, हुकमचन्द जैन/नारायण माली, जयपुर, 2008, पृ. 32

13द खरतरगच्छ पट्टावाली, पेज 9

14द खरतरगच्छ पट्टावाली, पेज 20–22

15द आर.वी. सोमानी, पृथ्वीराजचौहान एण्ड ईज टाईम्स, पेज 127

16द आर.वी. सोमानी, महावीर जयन्ती स्मारिका, 1971 पेज 77–78

17द पृथ्वीराजविजय, 6 सर्ग 50–53

18द राजस्थान सांस्कृतिक इतिहास, डॉ. गोपीनाथ शर्मा, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2003, पृ.64

19द इण्डियन एपीग्राफी, 1965–66, 486

20द एपिग्राफिया इण्डिका, पेज 59

21द अर्ली चौहान डायनेस्टीज पेज 38

22द आर. वी. सोमानी, पृथ्वीराजचौहान एंड हिज टाईम्स, पेज 129

23द वहीं, पेज 113